Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 15, Issue No. 7, September-2018, ISSN 2230-7540

उपभोगजन्य अनिश्चितता तथा हिन्दी कहानी

Dr. Kamal[1]* Dr. Sushila Kumari[2]

[1] Assistant Professor, Chhotu Ram Arya College, Sonepat

[2] Assistant Professor, Department of Hindi, MDU, Rohtak

सारांश – ***विचारधारात्मक संवेदनशीलता के अतिरिक्त समाज में व्याप्त अनिश्चितता का दूसरा बड़ा कारण अकेलापन या अकेलेपन की भावना है। अकेलेपन की भावना के भी कई कारण है जैसे बौद्धिक वर्ग में अकेलापन पैदा करने वाला एक कारण जिसका हमने अभी-अभी वर्णन किया है, किसी न किसी विचारधारा से जुड़ा हुआ था तथा एक विचारधारा से जुड़े सभी व्यक्ति चाहे वह किसी भी वर्ग, धर्म, जाति, लिंग के हो, संगठित महसूस करते है। संगठन या एकता व्यक्ति को हमेशा अकेलेपन में सहारा देती है। आधुनिकता में उपस्थित दो अवलम्बों में से दूसरा अवलम्ब ईश्वर का था वह भी कमजोर पड़ गया।***

----------X----------

अकेलेपन का दूसरा कारण आर्थिक और जीवनशैली जन्य है। आर्थिक कारणों ने आधुनिकता में गाँवों और नगरों की संयुक्त परिवार परम्परा को तोड़ दिया था तथा एकल परिवारों को जन्म दिया था जिसके कारण युवा वर्ग की आर्थिक समस्या तो कुछ न कुछ हल अवश्य हुई थी परन्तु इसने अपने पीछे बुजुर्गों को नितान्त असहाय और निराधार कर दिया था। आज विकसित देशों और हमारे महानगरों में एकल परिवारों के पति और पत्नी दोनों के काम करने के कारण हमारे बच्चे भी असुरक्षित हो गए है। परिवार को जो अनमाँगा और अनकहा सुख और सुरक्षा घर के वृद्धों और बच्चों को प्राप्त था उससे वंचित होकर यहाँ तक विवाह नाम की संस्था भी खतरे में पड़ गई है क्योंकि युवा वर्ग आज यह महसूस करता है कि वह अपना ही बोझा उठाने में असमर्थ है इसलिए वह विवाह बन्धन से ही मुक्त होना चाहता है तथा अल्पकालिक Live-in Relationship में रहकर प्रत्येक जिम्मेवारी से मुक्त होना चाहता है और यही सब कुछ वृद्ध पूंजीवाद का सांस्कृतिक तर्क है।

पूँजीवादी वैश्वीकरण की आर्थिक नीतियों का परिणामस्वरूप जहाँ वित्त का आवागमन सुगम हुआ है। आर्थिक विषमता के कारण भारत में पंजाब जैसे समृद्ध राज्य में भी बहुत से युवा विदेशों को कूच कर गए हैं। इसी प्रकार बिहार जैसे पिछड़े राज्य से लोगों का भारत के अन्य राज्यों में पलायन हो रहा है। जिसके परिणाम स्वरूप पीछे गाँवों में वृद्धों का असहाय बुढापा और अकेलापन है और दूसरी तरफ विदेशों में तथा दूसरे राज्यों में लोगों का भावनात्मक अकेलापन और असुरक्षा अनिश्चितता है।

अकेलेपन और अजनबीपन के दर्द को सहना उत्तर आधुनिक मानव की नियति बन गई है। इस विस्तृत और व्यापक समाज में विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों में जकड़ा हुआ मानव एकांकीपन और संत्रास को भोगने के लिए विवश है। इस प्रकार की परिस्थितियों का उत्तरदायी स्वयं मानव ही है। अकेलेपन के कारण व्यक्ति कई प्रकार के मानसिक विकारों से ग्रस्त हो जाता है और वह बाह्य जगत से हटकर आत्मकेन्द्रित हो जाता है। व्यक्ति का अपना जीवन निःसार और अस्पष्ट बन गया है। व्यक्ति अपने स्वार्थ और, स्वकेन्द्रण के कारण समाज से अजनबी बनता जा रहा है।

घोर भौतिकवादी युग में व्यक्ति केवल स्वयं में ही सिमट कर रह गया है। बढ़ती अर्थलिप्सा से आपसी सम्बन्धों को छिन्न-भिन्न कर दिया है। 'स्वर्ण नदी रेत की' की स्त्री पात्र पुनीता सब प्रकार के सुख-सुविधाओं से सम्पन्न है। उसका पति व्यभिचारी है, जिसके कारण घर में कलह रहने लगा। घर की सुख-शांति नहीं रही तथा बेटा भी घर-बार त्याग कर विदेश चला गया। बेटे के विदेश जाने की खुशी में बाहरी दिखावे के लिए भव्य समारोह का आयोजन करती है। लेकिन उसके अन्तर्मन की पीड़ा उसे निरन्तर व्यथित करती रहती है। कहानी के अन्त में वह अपने अकेलनपन पर आँसू बहाती है। उसे लगता है कि - "सब लोग सच को नहीं स्वार्थ को जीते है।"

इस उत्तर आधुनिक समय में व्यक्ति के सामाजिक आर्थिक, नैतिक आदि सम्बन्धों का आधार स्वार्थों पर ही आधारित हो गया है। स्वार्थ ही हमारे मूल्य और आदर्शों को तय कर रहा

www.ignited.in

है। स्वार्थी मनुष्य उन्हीं लोगों से सम्बन्ध बनाता है जो जीवन में उसके काम आ सके इसी स्वार्थ के कारण वह अकेला होता जाता है, उदय प्रकाश की कहानी 'दत्तात्रेय के दुःख' में वर्णित किया है कि शहरी सभ्यता अत्यन्त स्वार्थान्ध है और अपनी स्वार्थ-लिप्सा पूरी करने में ही अपने जीवन की पूर्ति मानता है। अक्सर ये लोग ही उसी से मिलना-जुलना पसंद करते है जो किसी काम आ सके। "दिल्ली में ऐसे लोगों की संख्या इधर बढ गई थी, जो सिर्फ उसी से मिलते थे, जिनसे उनका कोई काम होता था।"

उत्तर आधुनिक जीवन गैर पारम्परिक जीवन है जहाँ विकल्प निश्चित जीवन मूल्य नहीं इसलिए चाहे देवनाथ हो या 'जिंदगी और गुलाब में फूल की बृन्दा हो सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि आर्थिक स्वतन्त्रता के हावी होते ही मूल्यों, रिश्तों के बदलाव दिखाई देने लगता है। भाई के बेकार होते ही बृंदा कितनी आसानी से एक एक भाई की सारी चीजें हस्तान्तरित कर लेती है।

"पहले अपनी चीजें बृंदा के कमरे में सजी देखकर उसे कुछ अटपटा लगता था पर अब वह अभ्यस्त हो गया था।"

यही नहीं कि संयुक्त परिवार के विघटन का कारण केवल आर्थिक स्वार्थ हो जहाँ अपनी-अपनी स्वतन्त्रता में व्यस्त उनके बच्चे उन्हें बाधक समझने लगते हैं। मिथिलेश्वर की 'चल खुसरो घर आपने' शहरीकरण और इसी परिवार में उपेक्षित माँ के सम्बन्ध की जार-जार होती कहानी है। "इस पर जवाब में कहा था पति ने बच्चे चाहे जहाँ नौकरी करे जिन शहरों मंे घर बसाए हमारा अपना घर तो होना चाहिए, जो हमारा बिल्कुल अपना हो, जिसमें अपनी इच्छा के अनुसार जीने का हमें पूरा अधिकार हो. . .।"

इस कहानी के सभी पात्र रेखा, मनीषा, नेहा, अनुभा, नितिन, आकाश और बैंक मैनेजर चोपड़ा स्वकेन्द्रण जीवन जीते हैं। नैतिकता या सामाजिक मर्यादाओं से इनका कोई लेना देना नहीं है। रेखा, अनुभा और नेहा स्त्री स्वातंत्र्य का अर्थ दैहिक आजादी मानती हैं।

नेहा पाश्चात्य सभ्यता से सर्वाधिक प्रभावित युवा वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है जो जीवन में भोग को ही सर्वस्व मानती है। नेहा भी जीवन का पूरा आनंद उठाना चाहती है। वह पढ़ाई करने के लिए फतेहपुर से लखनऊ आई है, पर उसका वास्तविक लक्ष्य महानगरीय जीवन का स्वच्छन्द आनन्द उठाना है। वह अपने इन्हीं मनोभावों को मनीषा के आगे व्यक्त करती हुई कहती है-"चाची ये कोई लाइफ है, बस खूब सारे पैसे कमाने और एंज्वायमेंट के नाम पर जीरो। न क्लब न पार्टी...। मैं तो उसके बिना रह ही नहीं सकती। मेरा कोई फ्रेंड भी नहीं है वहां और बी.एफ (ब्वाय फ्रेंड) के नाम पर तो वहीं लोग मुंह पर हाथ रख लेते हैं। मेरा मन तो दस-पन्द्रह दिन लखनऊ आकर न रहूं, तो डिप्रेशन होने लगता है यहां। मेरे कितने फ्रेंडस हैं. . .सो स्वीट. . . आप मिलकर देखो, यू विल लव दैम।"

इसी प्रकार अनुभा भी स्वकेन्द्रण जीने की शौकीन है। वह भी सामाजिक मर्यादाओं को बन्धन मानती हैं।

स्वार्थ व स्वकेन्द्रण जीवन जीने के पक्षधर पाश्चात्य देशों में तो बहुत पहले से विवाह को एक बन्धन माना जाता रहा है। अब तो भारतीय लोगों पर भी इस सोच का प्रभाव पड़ने लगा है। विवाह किए बिना साथ-साथ रहना (लिव इन रिलेशनशिप) तथा विवाह विच्छेद आदि पश्चिमी समाज की बुराईयां भारतीय समाज में फैलने लगी हैं।

भारतीय युवा वर्ग विशेषकर बड़ी-बड़ी कम्पनियों में कार्यरत युवक-युवतियां विवाह को उन्नति में सबसे बड़ी बाधा मानते हैं। वे परिवार की जिम्मेदारियों को वहन करने में असमर्थता व्यक्त करते हैं। वे स्वयं आजाद जिन्दगी का आनन्द उठाना चाहते हैं, इसलिए महानगरों में 'लिव इन रिलेशनशिप' का प्रचलन बढ़ता जा रहा है।

वैवाहिक संस्थाओं के टूटने की विद्रूपता को 'आधी दुनिया, आधे सपने, आधा सच' की नेहा और अनुभा ऐसी युवतियां हैं, जो विवाह के बिना ही शारीरिक सुख पाना चाहती है पर विवाह को बंधन मानती है। नेहा अपनी चाची मनीषा से कहती है-"मैरिज चाची - हैव यू गान मैड. . .। आई वांट टू एंज्वाय लाइफ।"

अनुभा जो लखनऊ विश्वविद्यालय में रीडर है, उसके मन में भी वैवाहिक संस्था के प्रति कोई विश्वास नहीं है। अपनी सहेली मनीषा के पूछने पर कि क्या उसने विवाह किया है, वह कहती है- "अफकोर्स यार, आई लीड ए फ्री लाइफ। क्या तूने शादी नहीं की मनीषा भौंचक होकर पूछती है- "क्या मैरिज उतनी जरूरी है। इटस ए ब्लडी रांटन इंस्टिट्यूशन। औरत को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाती है। यह मानवीय अस्तित्व का बदतर भाग्य"

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कोई भी संस्कृति बुरी नहीं होती है। हमें प्रत्येक संस्कृति की अच्छी चीजें ही ग्रहण करनी चाहिए। लेकिन दूसरी संस्कृति के आगोश में अपनी संस्कृति को खो देना भी मूर्खता है। लेकिन हम भारतीयों की एक विशेषता बनती जा रही है कि हम अंधाधुंध पाश्चात्य संस्कृति

का अनुकरण कर रहे है और अपनी संस्कृति को विस्मृत करते जा रहे हैं। यह देश और उसके प्रत्येक देशवासी के लिए कष्टदायी ही नहीं अपितु हानिकारक भी है। पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण भारतीय संस्कृति पर कुठाराघात है।

ये स्वार्थ और स्वकेन्द्रण के कारण ही हम अपनी जड़ों से कट गए हैं। हम केवल अपने तक सीमित हो गये हैं। मनीषा कुलश्रेष्ठ ने अपनी कहानी 'प्रेतकाम' में इन्हीं तथ्यों की तरफ संयुक्त रूप से संकेत किया है। इस कहानी की नायिका कहती है-''मैं शादी ही नहीं करूँगी" और वही समय था कि मैं अर्जुन से 'एकलव्य' बन गयी।

मैं पुरूष होकर अपने लेखन को शादी और इस यूनिवर्सिटी की नौकरी के बाद ज्यादा समय नहीं दे पाता। तुम तो लड़की हो शादी के बाद घर-गृहस्थी के झंझट।"

''शादी करके अपने लक्ष्य से मैं नहीं भटकूँगी सर।"

आज समाज में सम्बन्धों में अप्रत्याशित परिवर्तन हो रहे हैं। असगर वज़ाहत ने अपनी कहानियों में सामाजिक सम्बन्धों के मूल्यों के प्रमाण को सूक्ष्म रूप से प्रतिबिम्बित किया है। ''आज के आधुनिकोन्मुख समाज में नैतिकता व मूल्यों का इस कद्र ह्रास हो चुका है कि नैतिकता और अनैतिकता में अन्तर करना कठिन है। वर्तमान युग परिस्थितियों और परिवेश के सन्दर्भ में पुराने मूल्यों पर विचारों को त्यागकर नई विचारधाराओं से चालित होने की गवाही देने लगता है।" श्री टी॰पी॰ देव की कहानियाँ शीर्षक के अन्तर्गत वज़ाहत जी ने स्पष्ट किया है कि आज का मानव सामाजिक न होकर एकाकीपन का शिकार हो रहा है। इसके लिए जिम्मेदार कोई और नहीं बल्कि मनुष्य स्वयं ही है। प्रस्तुत कहानी में दिखाया गया है कि किसी प्रकार एक पड़ोसी दूसरे पड़ोसी का नाम तक नहीं जानता। जो कि मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों के अभाव को प्रदर्शित करता है। ''मगर उन्हें यह मालूम नहीं था कि उनके पड़ोसी के पास कौन-सी कार है। उन्हें तो यह तक पता न था कि उनका पड़ोसी कौन है और कहाँ रहता है, लेकिन उन्हें यह मालूम था ईष्र्या क्या होती है।" यदि व्यक्ति समाज में रहता हुआ सामाजिक नहीं है अर्थात् समाज के साथ उसके सम्बन्ध नहीं है तो ऐसा व्यक्ति प्रेम और सद्भाव नहीं अपितु केवल ईर्ष्या और द्वेष को ही समझ सकता है। ऐसे में उसका जीवन निष्क्रिय बन जाता है। ऐसे व्यक्ति का कोई दोस्त, कोई अपना नहीं होता। 'श्री टी॰पी॰ देव की कहानियाँ' शीर्षक के अन्तर्गत नौंवी कहानी में श्री टी॰पी॰ देव की ऐसी ही स्थिति को दर्शाया गया है। ''फिर ध्यान आया कि उनका तो कोई दुश्मन भी नहीं। सोचा कि किसी दोस्त को ही पकड़ा देंगे, मगर वहीं समस्या थी। उनको कोई दोस्त भी नहीं था।" ऐसा व्यक्ति मशीन की भाँति बन जाता है। उसमें मानवीय संवेदनाएँ समाप्त हो जाती हैं। वह मनुष्य स्वभाव की आवश्यकताओं को भूल जाता है। जब टी॰पी॰ देव के साहब उनके आराम करने की बात कहते हैं तो टी॰पी॰ देव बड़े आश्चर्य से कहते हैं कि यह किसी फाइल की बात की जा रही है।

'कंधे पर पहाड़' कहानी में सोनी कहता है, "कैसे क्या लगेगा? मेरा बाप है ही कहाँ ? वह तो तीन साल पहले ही सोनी अपना वाक्य भी पूरा नहीं कर पाया। लेकिन वह जल्द ही संभल गया।" घोर भौतिकवादी युग में व्यक्ति केवल स्वयं में ही सिमट कर रह गया है। बढ़ती अर्थलिप्सा ने आपसी सम्बन्धों को छिन्न-भिन्न कर दिया है। 'स्वर्ण नदी रेत की' की स्त्री पात्र पुनीता सब प्रकार के सुख-सुविधाओं से सम्पन्न है। उसका पति व्यभिचारी है, जिसके कारण घर में कलह रहने लगी। घर की सुख-शांति नहीं रही तथा बेटा भी घर-बार त्याग कर विदेश चला गया। बेटे के विदेश जाने की खुशी में बाहरी दिखावे के लिए भव्य समारोह का आयोजन करती है। लेकिन उसके अन्तर्मन की पीड़ा उसे निरन्तर व्यथित करती रहती है। कहानी के अन्त में वह अपने अकेलेपन पर आँसू बहाती है। उसे लगता है कि - "सब लोग सच को नहीं, स्वार्थ को जीते हैं।"

मालती जोशी की कहानी 'छोटा सा मन, बड़ा-सा दुःख' में माता-पिता की व्यावसायिक व्यस्तता के कारण उनके पुत्र गोगी के अकेलेपन को चरितार्थ करते हुए अमुक पात्र कहता है - "सच कहूँ बेटा, लड़के पर दया सी आ गयी थी। इतना छोटा सा है और कितना बड़ा दुःख मन में छिपाये बैठा है। भला उसकी उम्र है इतना सब झेलने की।"

'पराजय' कहानी के नकुल के माँ-बाप भी गोगी के माँ-बाप की ही तरह नौकरी करते हैं। नकुल को स्कूल के बाद घर में अकेलापन दुखदायी लगता है -"चाभी लेकर उसने दरवाजा खोला और लगा भीतर का सन्नाटा उसे लील ही जाएगा। रोज यही होता है। उसे सूने घर में पाँव देने की इच्छा ही नहीं होती। यह सुबह का स्कूल उसे जरा भी अच्छा नहीं लगता। इससे तो अच्छा तीसरी कक्षा में ही बना रहता। कम से कम दोपहर भर घर में अकेले तो नहीं रहना पड़ता।"

वरिष्ठ कथाकार उदय प्रकाश कहानी में नए प्रयोग के लिए जाने जाते हैं। उनके कहानी संग्रह 'दत्तत्रेय के दुख' में भिन्न-भिन्न प्रकार के कथानकों की छोटी-छोटी कहानियों में मनुष्य के आंतरिक पक्ष की गहनता से जांच करते हैं। उनकी कहानियों में सभी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक मुद्दों का मूल्यांकन हुआ है। उनके लोकप्रिय

पात्र दत्तात्रेय का अकेलापन व विवशता उनसे देखी नहीं जाती। उनके अकेलेपन का कारूणिक वर्णन करते हुए वरिष्ठ रचनाकार कहते हैं कि- "विनायक दत्तात्रेय जब दुर्दिनों में थे, न कोई उनके पास आता था, न कोई उनका हाल पूछता था, न कोई टेलिफोन, वे एकदम अकेले हो गए थे। उन्होंने अकेलापन और दुर्दिन के दिन बिताने का नायाब तरीका खोज लिया था-"वे अपने कमरे के एक कोने में जाकर खड़े हो जाते और पुकारकर पूछते,-विनायक कैसे हो?"

मृदुला सिन्हा की कहानियां हमें सामाजिक प्राणी होने का अहसास कराती हैं, जहाँ दुख और सुख सामूहिक होता है, व्यक्तिगत नहीं। यहाँ रूदन और हंसी नितांत व्यक्तिगत होती है। कभी-कभी तो एक परिवार के बीच भी नहीं बँटती। दुख और सुख का आदान-प्रदान नहीं होता। एक स्थान पर जमा रहने के कारण गहराई तक जाता है, घाव कर देता है, पर ये झुग्गियां आज भी हमें सामाजिक जीवन की ज्वलन्त समस्याओं से रू-ब-रू कराती हैं। ये कहानियां पाठक की अन्तःचेतना को झकझोरती हैं। ये व्यक्ति, परिवार और समाज को तोड़ती नहीं, जोड़ती हैं।

वहीं दूसरी ओर आधुनिकता एवं व्यस्तता के कारण मानव जीवन बोझिल बनता जा रहा है। मनुष्य निरन्तर शंकाओं से घिरा अपने आपको काफी असहज महसूस करता है। इन संकटों के बीच फँसा हर आदमी अजनबीपन से ग्रस्त है, वह अपने ही लोगों के बीच नितांत अकेला और सिमटा हुआ है। लोगों के बीच बढ़ते अजनबीपन को लेखक 'बटरोही' जी ने अपनी कहानी 'पहेली' के माध्यम से काफी भावुक भावों से इंगित करते हुए कहते हैं- "तब इस शहर के अधिकांश लोग एक-दूसरे को जानते थे। आपस में बातें न भी करते हों, इतना तो जानते ही थे कि फलां आदमी अपने ही शहर का रहने वाला है। आज तो लोगों ने एक-दूसरे की ओर देखना ही छोड़ दिया है। नाक की सीध में आते हैं और अपना काम करके उसी तेजी से वापस अपने माजेक-टाइल्स वाले खूबसूरत घरों में बन्द हो जाते हैं। पहले से कहीं ज्यादा भरी रहने वाली मालरोड़ में कुछ चेहरे अब भी रोज दिखाई देते हैं लेकिन अब वो बात नहीं।"

मनोवैज्ञानिक समस्याओं के कारण व्यक्ति स्वयं में ही सिमट कर रह गया है। समाज और परिवार से उसकी दूरी निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। अकेलेपन, अजनबीपन के कारण उसके सुख, आराम सब छीनते ही जा रहे हैं।

डॉ. इन्दु बाली उत्तर आधुनिकतावादी दौर में टूट रहे समाज, परिवार व घरों की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए कहानी 'रिश्तों के दायरे में घर एवं मकान का तुलनात्मक अध्ययन करती हुई कहती हैं- "मेरी सास का घर, सच में घर था, एक सपनों का घर। मकान तो प्रायः भी बनाते हैं, शायद यह मानव की विवशता थी, क्योंकि सुरक्षित जीवन जीने के लिए छत का होना आवश्यक भी तो माना जाता है जिसे हर कोई बनाना चाहता, संवारना चाहता है, दर्शाता है आपके व्यक्तित्व को, प्यार के अहसास को। मूल्यवान व्यक्ति इसी अहसास को जीने के लिए घर बनाता है। सारी जिन्दगी इसी घर के लिए जीते हैं, मरते हैं। जहाँ छोटा-बड़ा, अमीर-गरीब, अपना-पराया सब समानता से रहते हैं।"

आज के उत्तर आधुनिक समय में मनुष्य उपभोग संलिप्तता के कारण समाज से दूर होता जा रहा है और यह दूरी उसे अकेलेपन की और ले जा रही है। काशीनाथ सिंह की कहानी 'अपना रास्ता लो बाबा' में भी इसी तरह की स्थिति है जिसमें उपभोक्तावाद का शिकार होने के कारण वह कथाकार अपने पिता को भी नहीं संभाल पा रहा है और उपभोक्तावादी ढांचे में ढला देवनाथ बाबा से मुक्ति चाहता है।

"फिलहाल के लिए उन्हें लगा कि चुप मार जाओ और इस बात की चर्चा कहीं किसी से मत करो। उन्होंने काफी सोचने विचारने के बाद तीन पैसे वाली वी-काम्पलेक्स की सौ गोली, पाँच पैसे वाली लिव फिफ्टी टू की पचास और ऐसे ही दर्द की दस टिकियां ली।" यह है मोहभंग की प्रक्रिया का जीता-जागता सबूत जहाँ मूल्यों की सत्ता सम्बन्धों से ज्यादा हावी हो जाती है- "सारी जिन्दगी, सारी दुनिया और सारा जमाना तुम्हारे सामने पड़ा है। और तुम एक बेमतलब के बुड्ढे को लेकर मुहँ लटकाए बैठे हो।"

मालती जोशी की कहानी 'छोटा सा मन, बड़ा सा दुःख में माता-पिता की व्यावसायिक व्यस्तता के कारण उनके पुत्र गोगी के अकेलेपन को चरितार्थ करते हुए अमुक पात्र कहता है "सच कहुँ बेटा, लड़के पर दया सी आ गई थी इतना छोटा सा है और कितना बड़ा दुख मन में छिपाये बैठा है। भला उसकी उम्र है इतना सब झेलने की। एक तो उसकी नजरों के सामने यह सब कांड करने की जरूरत ही नहीं थी और घर में किसी को फुरसत नहीं कि कोई दो घड़ी बैठकर उसे प्यार से समझाए।"

'पराजय' कहानी के नकुल के माँ-बाप भी गोगी के माँ-बाप की ही तरह नौकरी करते हैं। नकुल को स्कूल के बाद घर में अकेलापन दुखदायी लगता है - "चाभी लेकर उसने दरवाजा खोला और लगा भीतर का सन्नाटा उसे लील ही जाएगा। रोज यही होता है। उसे सूने घर में पाँव रखने की इच्छा ही नहीं होती। यह सुबह का स्कूल उसे जरा भी अच्छा नहीं लगता।

इससे तो अच्छा तीसरी कक्षा में ही बना रहता। कम से कम दोपहर भर घर में अकेले तो नहीं रहना पड़ता।"

कहानीकार 'संजय कुन्दन' ने अपनी कहानी 'बॉस की पार्टी' में उपभोग संलिप्तता के कारण मनुष्य में आये अकेलेपन को दर्शाया है कि आज के उत्तर आधुनिक युग में मनुष्य के अकेलेपन के कारण उपभोग संलिप्तता है। कहानीकार ने वर्णित किया है कि किस प्रकार बी.के. उपभोग संलिप्तता से ग्रस्त है। उन्होंने कंप्यूटर ऑन किया। सब कुछ ठीक-ठाक था, बिल्कुल वैसा ही जैसा वे छोड़कर गए थे। उन्हें राहत मिली। उन्होंने घड़ी देखी सात बजने ही वाले थे। यानी उनके काम शुरू करने का वक्त हो गया था।

उन्होंने अपनी पैंट उतारी और निकर पहन ली। निकर और बनियान आजकल यही युनिफॉर्म था इस 'वर्कस्टेशन' का। वे दिन के दस बजे से शाम साढ़े पाँच बजे तक एक प्राइवेट कम्पनी में काम करते थे जहाँ वे असिस्टेंट सिस्टम मैनेजर थे। फिर सात बजे से रात बारह बजे तक वे अपने इस वर्क स्टेशन में काम करते थे।"

आज के इस उत्तर आधुनिक युग में एक परिवार के सभी व्यक्ति नौकरी करना पसन्द करते हैं जो अपने-अपने उपभोग में लगे रहते हैं जिनके कारण वह अपने माता-पिता को समय नहीं दे सकते की उनके साथ बैठ के बात करें या कहीं साथ में घूमने जाए जिसके कारण उनके माता-पिता को अकेलेपन में अपना जीवन जीना पड़ता है। इसका एक उदाहरण मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानी 'परिभ्रान्ति' में है जिसमें नायक को कहानीकार ने दर्शाया है "होनहार बेटों की कमाई पर सुख से रहे है। बेटे ही नहीं, बहुएँ भी डॉक्टर है, पढ़ी-लिखी अपने कामकाज में व्यस्त, उनके पास फालतू की चख-चख का वक्त ही कहाँ? सब अपने-अपने दायरों में व्यस्त है। अब तक स्वयं वे भी तो इसी व्यवस्था में सुखी थे। अपना योग, अपनी पढ़ने की आदत, लाफ्टर क्लब, गोल्फ, समय पर खाना, समय पर सैर। न्यूज, अखबार... पिछले बीस साल में बँधी-बँधाई दिनचर्या में पोते-पोतियों की आनन्दमयी घुसपैठ के अलावा उन्हें ही सब कुछ सराहनीय था। इसी अकेलेपन और निजता की आरामदेह आदत थी उन्हें।"

कहानीकार संजय कुन्दन ने अपनी कहानी 'मेरे सपने वापस करो' में वर्णित किया है कि किस प्रकार कथाकार अपने अतीत की यादों में गुम हो जाता है और अपने सुहाने दिनों को याद करता है लेकिन उसके लिए अब वह सिर्फ यादें हैं "मुझे तुम्हारे बोलने के हाव-भाव से लगता है कि तुम अभिनय कर सकते हो हम लोगों की नाट्य मंडली भी तो है, तुम उसमें आ जाओ।

अजय को अगर उस दिन विद्या भईया ने यह नहीं कहा होता तो वह जीवन के एक सुखद अनुभव से वंचित रहता। उसे लगा जैसे विद्या भइया ने उसके लिए एक नया रास्ता खोल दिया हो।

"वे उसके जीवन के सबसे सुखद दिन थे तब उसकी नाट्यमण्डली पूरे शहर में घूम-घूम कर नूक्कड़ नाटक कर रही थी। सुबह-सुबह पटना कॉलेज के सामने नाट्य दल इक्ट्ठा होता। फिर दस-पन्द्रह लड़के साइकिल पर सवार होकर विदा होते सबके कन्धे में झोला लटका रहा होता। किसी के झोले में डपली होती, किसी के झोले में बैनर होता, किसी के झोले में मुखौटा"

मनुष्य के अतीत से लौटने के असफल प्रयास को दर्शाते हुए संजय कुन्दन ने अपनी कहानी 'चिड़ियाघर' में लिखा है, लेखक के शब्दानुसार "पर यह ऐतिहासिक शोधकार्य कभी पूरा नहीं हो पाया पिछले पाँच सालों से यह अधूरा पड़ा है। रवि शंकर के जीवन का एजेंडा ही अपने रास्ते से भटक गया है बीच रास्ते में ठिठक गया है उसका स्वपन। क्या रविशंकर ने गलत रास्ता पकड़ लिया है क्या वह प्रो॰ श्यामल के रास्ते से अलग किसी रास्ते पर चल पड़ा है क्या अब बहुत देर हो चुकी है क्या फिर से उस रास्ते पर लौटा नहीं जा सकता यह सब सोचते हुए झटके से रूक गया रविशंकर। वह कहाँ से कहाँ आ गया।"

'लिस्ट से गायब' कहानी में भी कहानीकार ने अतीत में लौटने के असफल प्रयास को उजागर करते हुए लिखा है "जीवन के तमाम दृश्यों के बीच एक और दृश्य आकार लेता है उनकी आँखो में उनकी शादी के बाद का, इसी बच्चे के पैदा होने के बाद इक्कीसवें दिन होने वाली पूजा का दृश्य।"

संदर्भ सूची

1. यादवेन्द्र शर्मा, 'वाह किन्नी वाह', पृ॰ 65
2. उदय प्रकाश, दत्तात्रेय का दुःख, पृ॰ 57
3. उषा प्रियंवदा- जिन्दगी और गुलाब के फूल पृ॰ 108
4. मिथलेश्वर- चल खुसरो घर अपने, पृ॰ 12
5. शैलेन्द्र सागर, प्रतिरोध, पृ॰ 19
6. वही, पृ॰ 19
7. वही, पृ॰ 32

www.ignited.in

8. मनीषा कुलश्रेष्ठ, कठपुतलियाँ पृ॰ 25

9. डॉ. निधि गुप्ता, दसवें दशक के हिन्दी नाटक: संवेदना एवं शिल्प, पृ॰ 55

10. असगर वज़ाहत, मैं हिन्दू हूँ, पृ॰ 112

11. वही, पृ॰ 113

12. वेदप्रकाश अमिताभ, 'दुख के पुल से', पृ॰ 38

13. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र','वाह किन्नी वाह', पृ॰ 65

14. मालती जोशी, 'छोटा सा मन, बड़ा-सा दुःख', पृ॰ 103

15. वही, पृ॰ 37-38

16. उदय प्रकाश, 'दत्तात्रेय के दुख', पृ॰ 56

17. लक्ष्मण सिंह विष्ट 'बटरोही', 'हिडिम्बा के गाँव में, पृ॰ 96

18. डॉ. इन्दु बाली, 'रिश्तों के दायरे' पुष्पगंधा (पत्रिका), नवम्बर 2010-जनवरी 2011

19. काशीनाथ सिंह, 'अपना रास्ता लो बाबा'-दस प्रतिनिधि कहानी, पृ॰ 69

20. मालती जोशी, 'छोटा सा मन, बड़ा-सा दुःख', पृ॰ 103

21. वही, पृ॰ 37-38

22. संजय कुन्दन, बॉस की पार्टी, पृ॰ 152

23. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'कठपुतलियाँ', पृ॰ 76

24. संजय कुन्दन, वास की पार्टी, पृ॰ 36-37

25. वही, पृ॰ 64

26. अल्पना मिश्र, छावनी से बेघर, पृ॰ 95

Corresponding Author

Dr. Kamal*

Assistant Professor, Chhotu Ram Arya College, Sonepat

kamalsheoran87@gmail.com